साप्ताहिक
Live not just breaTHE

MPHIN/2015/63220
MP/IDC1528/16-18

दि कार्मिक पोस्ट

वर्ष : 6, अंक : 37 (प्रति बुधवार), इन्दौर, 5 मई से 11 मई 2021 पेज : 8 कीमत : 3 रुपये

प्लास्टिक के कचरे से मैंग्रोव वनों का घुट रहा है दम- अध्ययन

न्यूयार्क। मैंग्रोव के महत्व को दुनिया भर में स्वीकार किया गया है, लेकिन कई मानव जनित समस्याओं के कारण मैंग्रोव जंगलों में लगातार गिरावट आ रही है। इंसानों द्वारा इस्तेमाल करने के बाद फैंका गया प्लास्टिक का कचरा इन जंगलों के लिए बड़ी मुसीबत बनता जा रहा है। एक अध्ययन में कहा गया है कि जिन इलाकों में प्लास्टिक का कचरा अधिक है, वहां मैंग्रोव के जंगल सबसे तेजी से घट रहे हैं। ऐसे इलाकों में दक्षिण पूर्व एशिया प्रमुख है।

जावा के उत्तरी तट के मैंग्रोव वनों का धीरे-धीरे प्लास्टिक कचरे के कारण दम घुट रहा हैं। पूर्वोत्तर एशिया में प्लास्टिक की बहुत बड़ी समस्या है और यह इस क्षेत्र के मैंग्रोव के लिए एक बड़ा खतरा है, मैंग्रोव तटीय कटाव को रोकने में एक अहम प्राकृतिक भूमिका निभाते हैं। रॉयल नीदरलैंड्स इंस्टीट्यूट फॉर सी रिसर्च (एनआईओजेड) के शोधकर्ता सेलीन वैन बिजस्टरवेल्ट बताते हैं कि बेहतर कचरा प्रबंधन के बिना इस ग्रीन प्रोटेक्शन बेल्ट की बहाली असंभव है। वान बिजस्टरवेल्ट ने वर्षों से इंडोनेशियाई मैंग्रोव में प्लास्टिक कचरे की निगरानी की है। इसमें ज्यादातर घरेलू कूड़ा, दूसरे शहरों से तटीय क्षेत्रों तक स्थानीय नदियों द्वारा ले जाया जाता है। अंत में जमीन और समुद्र के बीच के क्षेत्र में यह कचरा फंस जाता है। वान बिजस्टरवेल्ट ने कहा कि मैंग्रोव के वनों पर प्लास्टिक फस कर एक तरह का जाल बन जाता हैं। मैंग्रोव वनों के लिए, यह जाल काफी घातक हो सकता है। जावा के तट पर सबसे आम मैंग्रोव वन, ग्रे मैंग्रोव, ज्वार के दौरान ऑक्सीजन लेने के लिए इनकी जड़ें ऊपर की ओर बढ़ती हैं। वान बिजस्टरवेल्ट कहते हैं आप इन जड़ों को श्वास नली (स्नोर्कल) के रूप में देख सकते हैं। जब इन जंगलों में प्लास्टिक कचरा जमा होता है, तो श्वास नली (स्नोर्कल) अवरुद्ध हो जाती हैं। प्लास्टिक से पूरी तरह से भरे क्षेत्रों में पेड़ों का दम घुटता है। यह अध्ययन साइंस ऑफ द टोटल एनवायरनमेंट में प्रकाशित हुआ है। वान बिज़स्टरवेल्ट बताते हैं कि उत्तरी तट के किनारे मैंग्रोव वनों के तल प्लास्टिक कचरे से घिरे हुए हैं। औसतन हमें 27 प्लास्टिक आइटम प्रति वर्ग मीटर में मिलते हैं, कई स्थानों पर जंगल के आधे हिस्से प्लास्टिक से ढ़के हुए हैं। समस्या केवल सतह पर प्लास्टिक नहीं है। टीम ने पाया कि प्लास्टिक तलछट (सेडीमेंट) के अंदर 35 सेंटीमीटर तक गहरे दबे हुए हैं। प्लास्टिक के इन ऊपरी परतों में फंसने से पेड़ों की ऑक्सीजन तक पहुंच कम हो जाती है। फिर भी पेड़ इस प्लास्टिक से ढ़के हुए क्षेत्र में भी अपने आपकों ढ़ाल रहे हैं। जब इनकी जड़ों पर प्लास्टिक फंस जाती है तो ये बदल जाते हैं। वे प्लास्टिक के चारों ओर बढ़ते हैं। जब वनों का आधा हिस्सा ढक जाता है, तब भी पेड़ों को अपने आपको बचाए रखने के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन मिलती है।

हालांकि 75 फीसदी तक पहुंच जाने के बाद इनके जीवित रहने के आसार बहुत कम हो जाते हैं और तलछट में प्लास्टिक इसे 100 फीसदी तक धकेल देता है। हमने प्लास्टिक की थैलियों के अंदर जड़ों को देखा है। अंततः वे पेड़ जो प्लास्टिक को नहीं निकाल सकते वे मर जाते हैं। स्थानीय समुदायों के सहयोग से वैन बिजस्टरवेल्ट आगे के कटाव को रोकने के लिए मैंग्रोव की बहाली करने वाली परियोजनाओं पर काम कर रहे हैं। वान बिज़स्टरवेल्ट ने कहा कि मैंग्रोव तटीय समुदायों के लिए एक कम लागत वाली और प्राकृतिक तौर पर रक्षा करते हैं। वे लहरों को रोकते हैं और पानी के साथ तलछट (सेडीमेंट) के बहने को रोकते है जिससे कटाव रुक जाता हैं। मैंग्रोव वनों की बहाली से अधिक लाभ होता है। स्वस्थ मैंग्रोव का मतलब है स्वस्थ मछली की आबादी और एक निरंतर मछली पकड़ने की अर्थव्यवस्था। पर्यटन उद्योग जंगलों को एक बढ़ते आकर्षण के रूप में भी देख रहा है जो स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ाता है। इंडोनेशिया सरकार तट के किनारे ग्रीन-बेल्ट बनाने के प्रयास में मैंग्रोव बहाली में निवेश कर रही है। लेकिन बहाली धीमी है और मौजूदा वनों पर अधिक दबाव है। वान बिज़स्टरवेल्ट ने बताया कि नए मैंग्रोव लगाने के प्रयास विफल रहे हैं। %मैंग्रोव लगाने की प्रारंभिक संख्या में वृद्धि करने पर इतना ध्यान केंद्रित किया गया है, कि बड़े पेड़ों के वास्तविक अस्तित्व पर प्लास्टिक कचरे से उत्पन्न चुनौतियों की अनदेखी की गई है। प्लास्टिक की समस्या से निपटने के बिना मैंग्रोव को फिर से भरना एक चम्मच से महासागर को खाली करने की कोशिश करने जैसा है। स्थायी अपशिष्ट प्रबंधन के साथ मैंग्रोव की सफल बहाली के लिए सही से काम करने की जरूरत है।

गंगा में प्लास्टिक प्रदूषण बढ़ रहा...

लखनऊ। *गंगा नदी में प्लास्टिक प्रदूषण कुछ ही महीनों में हजारों किलोमीटर की यात्रा तय कर सकता है, यह बात गंगा में छोड़े गए इलेक्ट्रॉनिक टैग वाले प्लास्टिक बोतल से पता चली है। शोधार्थियों ने यह निष्कर्ष जीपीएस और सेटलाइट टैग वाली प्लास्टिक बोतलों को गंगा और बंगाल की खाड़ी में छोड़ने के बाद पाया। इलेक्ट्रॉनिक टैग वाली बोतल ने अधिकतम दूरी 2854 किलोमीटर (1,786 मील) 94 दिनों में पूरी की। एक्सटे र यूनिवर्सिटी और जूओलॉजिकल सोसाइटी ऑफ लंदन (जेएसएल) के शोधार्थियों ने नेशनल जियोग्राफिक सोसाइटी सी टू सोर्स को साथ मिलकर यह अधययन किया है। एक्सटेर यूनिवर्सिटी के सेंटर फॉर इकोलॉजी एंड कंजर्वेशन के डॉक्टर इमिली डुंकन ने बताया कि टैग वाली प्लास्टिक बोतल में हमारा संदेश था कि यह प्लास्टिक प्रदूषण कितनी दूर और कितनी तेजी से कहीं जा सकता है। यह दर्शाता है कि यह वास्तिवकता में वैश्विक मुद्दा है, सिर्फ एक प्लास्टिक पीस नदी या समुद्र में फेंका जाए तो वह दुनिया के किसी दूसरे कोने में जाकर मिलेगा। समुद्र मे बोतल जबरदस्त दूरी नाप सकती हैं क्योंकि वहां कोस्टल करंट पहले होता है उसके बाद वह और चौड़े स्तर पर फैल जाता है। इस अध्ययन में 500 मिलीलीटर की 25 बोतलों को गंगा में फेंका गया था।*

प्लास्टिक पेनों से होने वाला 91 फीसदी कचरा नहीं होता रिसाइकल

न्यूयार्क। हर साल 160 से 240 करोड़ प्लास्टिक पेन बाजार में आते हैं। जिनकी वजह से जो प्लास्टिक वेस्ट उत्पन्न होता है उसमे से 91 फीसदी रिसाइकल नहीं होता । जिसकी सबसे बड़ी वजह इस कचरे पर ध्यान नहीं दिया जाना और पेन निर्मातों की कचरे के सम्बन्ध में जवाबदेही को तय नहीं किया जाना है। शिकायतकर्ता अवनि मिश्रा ने अपनी अर्जी में बताया था कि देश में आज भी प्लास्टिक पेनों से होने वाले कचरे के प्रबंधन के लिए विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ईपीआर) को पूरी तरह लागु नहीं किया गया है।

यह जानकारी सीपीसीबी द्वारा नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) के समक्ष दायर रिपोर्ट में दी गई है। जोकि प्लास्टिक पेनों से होने वाले कचरे के मामले में तैयार की गई है। जिसके कारण पर्यावरण पर बुरा असर पड़ रहा है। सीपीसीबी ने जानकारी दी है कि उसने ईपीआर के तहत 92 ब्रांड मालिकों और 4 उत्पादकों को पंजीकृत करने की प्रक्रिया शुरू कर दी है। जिनके अंतर्गत प्रति वर्ष 4.5 लाख टन ईपीआर का लक्ष्य रखा है। भारत ही नहीं दुनिया भर में बड़े पैमाने पर प्लास्टिक से बने पेनों का इस्तेमाल किया जाता है। जिन्हें प्रयोग के बाद फेंक दिया जाता है। पर इससे जो कचरा उत्पन्न होता है। वो अन्य प्लास्टिक उत्पादों की तरह ही पर्यावरण के लिए हानिकारक होता है।

सीपीसीबी ने प्लास्टिक वेस्ट पर जारी 2018 -19 की अपनी वार्षिक रिपोर्ट में बताया था कि उस वर्ष देश में 33,60,048 टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न हुआ था। जिस तरह से आज यूज एंड थ्रो कलचर चल रहा है उसमें प्लास्टिक कचरे को बढ़ने में प्लास्टिक पेनों का योगदान काफी ज्यादा है। लेकिन इसका जिक्र बहुत कम जगहों पर होता है। टॉक्सिक लिंक द्वारा जारी एक स्टडी %सिंगल यूज प्लास्टिक-द लास्ट स्ट्रॉ% के अनुसार केवल एक महीने में केरल के ही स्कूल स्टूडेंट्स करीब 1.5 करोड़ पेन को फेंक देते हैं। गौरतलब है कि अवनि मिश्रा ने यह मामला एनजीटी में उठाया था। जिसमें प्लास्टिक पेनों से होने वाले प्रदूषण और उसके कचरे के प्रबंधन के लिए पेन निर्मातों की जवाबदेही तय करने की मांग रखी गई थी। इससे होने वाले कचरे को रोकने के लिए उन्होने पेनों के उपयोग के बाद निर्माताओं द्वारा उसे वापस खरीदे जाने की मांग रखी थी। जिससे उनका उचित प्रकार से निपटान किया जा सके। इस मामले में नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने एक आदेश जारी किया था जिसमें सीपीसीबी को इस मामले पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करनी थी।

क्या होता है विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ईपीआर)- देश में प्लास्टिक कचरे की समस्या अत्यंत गंभीर है। इसलिए उसके उचित प्रबंधन के लिए प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियम (पीडब्लूएम), 2018 के तहत निर्मातों की जिम्मेवारी तय करने की योजना तैयार की गई थी। जिसे विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ईपीआर) के नाम से जाना जाता है। सीपीसीबी के अनुसार वर्तमान में विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ईपीआर) को लागु करने के लिए के लिए एक नेशनल फ्रेमवर्क पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के समक्ष विचाराधीन है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) ने ईपीआर के तहत कवर की जाने वाली वस्तुओं को स्पष्ट किये जाने के बारे में भी मंत्रालय से बातचीत की है। गौरतलब है कि प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2018 के अनुसार, प्रयोग किये गए बहु-स्तरीय प्लास्टिक पाउच और पैकेजिंग प्लास्टिक के संग्रहण की प्राथमिक जिम्मेदारी उत्पादकों, आयातकों और ब्रांड मालिकों की होती है, जो बाज़ार में उत्पादों को पेश करते हैं। प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियम (पीडब्लूएम), 2018 के नियम 6(1) के अनुसार प्लास्टिक सम्बन्धी कचरे को छांटने, इकट्ठा करने, भंडारण, परिवहन, प्रसंस्करण और निपटान की जिम्मेवारी स्थानीय निकायों की होती है। जिसे वो स्वयं या किसी अन्य एजेंसी की मदद से कर सकती हैं।

इस नियम में बहु-स्तरीय प्लास्टिक पाउच और पैकेजिंग प्लास्टिक को तो ईपीआर के अंतर्गत रखा गया है पर प्लास्टिक पेन और अन्य प्लास्टिक उत्पादों को कवर नहीं किया गया है। जिस वजह से इसके निर्माता अपनी जिम्मेवारी से बच जाते हैं।

भारत के बड़े शहर रोज उत्पन्न करते हैं 26 हजार टन प्लास्टिक

मुंबई। भारत में प्लास्टिक की खपत को सीमित करने के तमाम प्रयास कामयाब नहीं हो रहे हैं। देश में एक व्यक्ति साल में करीब 11 किलो प्लास्टिक की खपत करता है। भारत प्रति व्यक्ति न्यूनतम खपत वाले देशों में शामिल है, फिर भी हम दुनिया के 12 सबसे बड़े प्लास्टिक प्रदूषकों में शामिल हैं। इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि प्लास्टिक रिसाइक्लिंग के मामले में हम फिसड्डी साबित हो रहे हैं। भारत के प्रमुख शहर करीब 26,000 टन प्लास्टिक प्रतिदिन उत्पन्न कर रहे हैं।

इनसे से 60 प्रतिशत यानी 15,600 टन प्लास्टिक ही रिसाइकल हो पाता है। शेष प्लास्टिक कचरे में तब्दील हो जाता है। यह प्लास्टिक कचरा हमारे नालों को जाम और नदियों को प्रदूषित करता है। दिल्ली, चेन्नई, कोलकाता, मुंबई, बैंगलुरू, अहमदाबाद और हैदराबाद सर्वाधिक प्लास्टिक उत्पन्न करने वाले शहरों में शामिल हैं। प्लास्टिक को स्रोत यानी घर पर ही अलग-थलग करने की प्रणाली भी विकसित नहीं हो पाई है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की 2015 में जारी रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 70 प्रतिशत प्लास्टिक केवल एक बार इस्तेमाल के बाद फेंक दी जाती है। 66 प्रतिशत प्लास्टिक कचरे का स्रोत घर होते हैं। घर से निकलने वाले कचरे में इस प्लास्टिक को मिला देने से उसे अलग थलग करने में मुश्किलें आती हैं। अगर घर से ही इसे अलग कर लिया जाए तो समस्या काफी हद तक काबू में आ सकती है। यह बेहद महत्वपूर्ण है क्योंकि अगले 20 वर्षों में प्लास्टिक दोगुना हो जाएगा। भारत में प्लास्टिक का सृजन करीब 16 प्रतिशत की दर से हो रहा है। चीन में यह दर 10 प्रतिशत और ब्रिटेन में 2.5 प्रतिशत है। भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 2022 तक सिंगल यूज प्लास्टिक को चरणबद्ध तरीके से खत्म करने का लक्ष्य रखा है। भारत में सिंगल यूज प्लास्टिक का कारोबार 53,000 करोड़ का है और यह क्षेत्र 13 लाख लोगों को रोजगार भी देता है। ऐसे में देखना दिलचस्प होगा कि प्रधानमंत्री द्वारा निर्धारित किया गया लक्ष्य पूरा होता है या नहीं।

मानचित्र

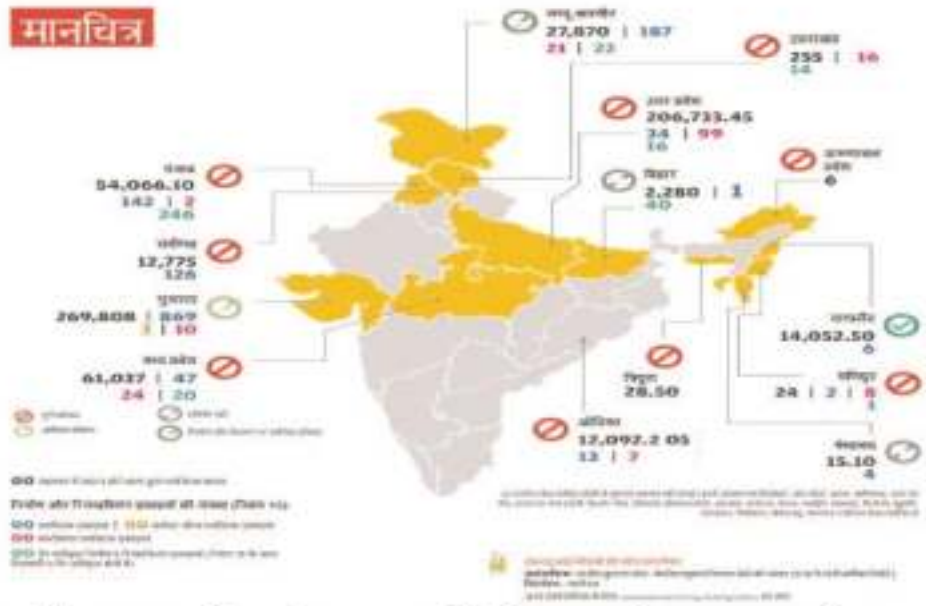

महामारी के बावजूद देश में केवल 38 फीसदी लोग पांच या उससे ज्यादा बार धोते हैं हाथ

मुंबई। एक तरफ जहां कोरोना महामारी से बचने के लिए सामाजिक दूरी और साफ सफाई पर जोर दिया जा रहा है जिसमें बार-बार हाथ धोना भी शामिल है, पर दूसरी तरफ देश में स्थिति ऐसी है कि अभी भी केवल 38 फीसदी लोग पांच या उससे ज्यादा बार हाथ धोते हैं। यह जानकारी अमेरिका की एक पोलिंग एजेंसी गैलप द्वारा किए सर्वेक्षण में सामने आई है।

सर्वेक्षण के अनुसार भारत दुनिया के उन 10 देशों में शामिल हैं जहां सबसे कम आबादी पांच बार या उससे ज्यादा बार पानी या साबुन से हाथ धोती है या फिर सैनिटाइजर का इस्तेमाल करती है। वहीं आधी से ज्यादा आबादी अभी भी चार या उससे कम बार जबकि 20 फीसदी आबादी दो या उससे कम बार हाथ धोती है या फिर सैनिटाइजर का प्रयोग करती है। यह पूछे जाने पर कि पिछले दिन उन्होंने कितनी बार अपने हाथ धोए या हैंड सैनिटाइज़र का इस्तेमाल किया तो करीब दुनिया की 58 फीसदी व्यस्क आबादी ने माना था कि उन्होंने पांच या उससे ज्यादा बार हाथ धोए थे या फिर सैनिटाइज़र का इस्तेमाल किया था। जबकि सिर्फ दो फीसदी लोगों ने कहा था कि उन्होंने एक बार भी हाथ नहीं धोया था। हालांकि देखने में यह आंकड़ा बहुत छोटा लगे, पर यदि इसे कुल आबादी के आधार पर देखें तो यह करीब 8.6 करोड़ होगा। इस आधार पर देखा जाए तो दुनिया में अभी भी काफी असमानता है। एक तरफ डेनमार्क और नॉर्वे जैसे देश हैं जहां 94 फीसदी लोग पांच या उससे ज्यादा बार हाथ धोते या सैनिटाइज़र का उपयोग करते हैं, वहीं माली जैसे देशों में यह आंकड़ा केवल 21 फीसदी ही है। जिन देशों में सबसे ज्यादा आबादी कम बार हाथ धोती हैं उनमें से ज्यादातर देश एशिया और अफ्रीका में हैं। इन देशों में अभी भी एक बड़ी आबादी साफ पानी और हाथ धोने की बुनियादी सुविधाओं से दूर है। कई देश तो ऐसे हैं जहां आज भी साफ़ पानी के लिए घंटों चलना पड़ता है। यदि विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी आंकड़ों को देखें तो दुनिया के करीब 300 करोड़ लोग अभी भी हाथ धोने सम्बन्धी बुनियादी सुविधाओं जैसे, पानी, साबुन की पहुंच से दूर हैं। वहीं दुनिया की हर तीन में से एक स्वास्थ्य केंद्रों में हाथ धोने की व्यवस्था नहीं है। उदाहरण के लिए माली को ले लीजिए जहां की कुल आबादी करीब 2 करोड़ है जिनमें से करीब 90 लाख के पास स्वच्छता सम्बन्धी बुनियादी सुविधाएं नहीं हैं। इसी तरह सेनेगल में जहां 24 फीसदी आबादी दिन में पांच बार हाथ धोती है वहां रहने वाले करीब 1.2 करोड़ लोग स्वच्छता सम्बन्धी बुनियादी सुविधाओं से दूर हैं। हाल ही में भारत में हाथ धोने के लेकर चार राज्यों में किए एक अध्ययन में 33 फीसदी लोगों ने हाथ न धोने के लिए पानी की कमी को जिम्मेवार माना था। सर्वे के अनुसार दुनिया में पुरुषों की तुलना में ज्यादा महिलाएं पांच या उससे ज्यादा बार हाथ धोती हैं। जहां 64 फीसदी महिलाओं दिन में पांच या उससे ज्यादा बार हाथ धोती या सैनिटाइजर का प्रयोग करती हैं, वहीं पुरुषों में यह आंकड़ा 52 फीसदी ही है। साथ ही लोगों की इस आदत पर शिक्षा का भी असर देखा गया था। जिन लोगों ने प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की थी। उनमें से करीब 48 फीसद पांच या ज्यादा बार हाथ धोते थे जबकि जिन लोगों ने स्नातक या उससे ज्यादा शिक्षा प्राप्त की थी उनमें 13 फीसदी लोगों ने माना था कि वो पांच या उससे ज्यादा बार हाथ धोते हैं। इसी तरह शहरी क्षेत्रों के करीब 63 फीसदी और ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले 54 फीसदी लोगों ने माना था कि वो दिन में पांच या उससे ज्यादा बार हाथ धोते हैं। कोरोना महामारी से पहले भी हाथ न धोना, स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से एक बड़ी समस्या था। जिससे संक्रामक बीमारियों के फैलने का खतरा काफी बढ़ जाता है। इस महामारी के बाद तो यह आदत बहुत मायने रखती है। आज जिस तरह से दुनिया में यह महामारी फैल चुकी है उससे बचने के लिए स्वच्छता की भी अहम भूमिका है। दुनिया के भारत जैसे कई देशों में जहां हाथ धोने पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता वहां स्वास्थ्य सम्बन्धी बुनियादी सेवाएं पहले से ही बहुत खस्ता हाल हैं। ऐसे में स्वच्छता से दूरी हमें इन बीमारियों के और करीब ले जाती है। साथ ही बीमारियों के प्रसार को रोकना और मुश्किल हो जाता है। ऐसे में कोरोना जैसी महामारियों से निपटने के लिए जरुरी है कि उससे बचने के लिए हाथ धोने जैसी बुनियादी चीजों पर भी गौर किया जाए।

मेघालय ने रखा दिसंबर 2022 से पहले हर ग्रामीण घर तक नल जल पहुंचाने का लक्ष्य

मेघालय मेघालय में कुल 5.89 लाख ग्रामीण परिवार रहते हैं जिनमें से करीब 16 फीसदी (93 हजार) को नल कनेक्शन दिए जा चुके हैं। मेघालय ने दिसंबर 2022 तक 100 फीसदी ग्रामीण घरों तक हर घर जल मिशन के तहत नल जल पहुंचाने का लक्ष्य रखा है। इस बात का खुलासा मेघालय में जल जीवन मिशन योजना और उसके कार्यान्वयन पर आयोजित वार्षिक कार्य योजना की बैठक के दौरान किया गया है। जो वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के जरिए आयोजित की गई थी।

यदि जल शक्ति मंत्रालय द्वारा जारी नवीनतम आंकड़ों को देखें तो मेघालय में कुल 5.89 लाख ग्रामीण परिवार रहते हैं जिनमें से 93 हजार (करीब 16 फीसदी) को नल कनेक्शन दिए जा चुके हैं। राज्य ने वर्ष 2020-21 में 8। हजार नल कनेक्शन प्रदान किए हैं। वहीं राज्य की योजना दिसंबर 2022 तक %हर घर जल% के लक्ष्य को हासिल करने की है। गौरतलब है कि 2020-21 में, मेघालय उन सात राज्यों में से एक था, जिन्हें जल जीवन मिशन के तहत प्रदर्शन प्रोत्साहन अनुदान प्राप्त हुआ था। इसके अलावा यह अनुदान प्राप्त करने वाले अन्य छह राज्य अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, सिक्किम, गुजरात, मणिपुर और हिमाचल प्रदेश थे।

अनुमान है कि जल जीवन मिशन के तहत, 2021-22 के दौरान मेघालय को लगभग 350 करोड़ रुपये की केंद्रीय निधि आबंटित की जा सकती है। यही नहीं समिति ने राज्य को विभिन्न कार्यक्रमों जैसे कि मनरेगा, जल जीवन मिशन, स्वच्छ भारत मिशन- ग्रमीण, पंचायती राज संस्थानों को 15वां वित्त आयोग अनुदान, जिला खनिज विकास कोष, क्षतिपूरक वनीकरण कोष प्रबंधन और योजना प्राधिकरण (कैंपा), कॉर्पोरेट सोशल रेस्पॉन्सिबिलिटी कोष, स्थानीय क्षेत्र विकास निधि आदि के लिए उपलब्ध धन का सही तरह से उपयोग करने का आग्रह किया गया है।साथ ही इस बात पर जोर दिया गया है कि ग्राम स्तर पर पीने के पानी की सुरक्षा के लिए इन सभी संसाधनों के विकास पर ध्यान देना जरुरी है। साथ ही समिति ने राज्य को सलाह दी है कि वह ग्राम स्तर पर ग्राम जल और स्वच्छता समितियों के गठन पर ध्यान केंद्रित करे। समिति ने राज्य को यह भी सलाह दी है कि वो सभी 33 जल परीक्षण प्रयोगशालाओं के लिए एनएबीएल से तुरंत मान्यता प्राप्त करे और जल जीवन मिशन के दिशानिर्देशों के अनुसार सभी पेयजल स्रोतों का 100 फीसदी परीक्षण करें। इस मिशन के तहत प्रमुख अधिकारियों की सक्रिय भागीदारी के साथ-साथ स्थानीय समुदायों को भी जल गुणवत्ता निगरानी में शामिल करने को प्राथमिकता दी जा रही है। इसके लिए गांव के ही 5 व्यक्तियों, विशेष रूप से महिलाओं को पानी की गुणवत्ता का परीक्षण करने के लिए फील्ड टेस्ट किट का उपयोग करना सिखाया जा रहा है। इसके अलावा लोगों को जल आपूर्ति और संरक्षण के लिए जागरूक करने की भी योजना तैयार करनी होगी।

'जल जीवन मिशन' केंद्र सरकार की एक महत्वाकांक्षी परियोजना है, जिसका उद्देश्य हर ग्रामीण घर तक नल जल उपलब्ध कराना है। इस योजना के तहत 2024 तक 19.1 करोड़ घरों को पाइप के जरिए साफ पानी पहुंचाने की बात कही गई है। यदि देश के ग्रामीण क्षेत्रों में 100 फीसदी नल जल के लक्ष्य की बात करें तो आज देश के 2 राज्यों, एक केन्द्रशासित प्रदेश, 58 जिलों, 113 ब्लॉक, 44,618 पंचायतों और 81,530 गांवों, 1.31 करोड़ घरों (38.13 फीसदी) तक नल के जरिए पीने का साफ जल पहुंच चुका है।

यदि हर घर जल मिशन की यह योजना सफल रहती है तो वह दिन दूर नहीं जब मेघालय के हर ग्रामीण घर को पीने का साफ़ पानी मिलने लगेगा, जिससे वहां दूषित पानी के कारण फैलने वाली बीमारियों पर भी काबू पाया जा सकेगा। लेकिन यह राह जितनी दिखती है उतनी आसान भी नहीं है। अकेले योजनाओं के बल पर इन लक्ष्यों को हासिल नहीं किया जा सकता, इसके लिए सामाजिक इच्छाशक्ति और एकजुटता भी जरुरी है।

पेट्रोलियम उद्योग में काम करने वाले मजदूरों को कहीं ज्यादा है कैंसर का खतरा...

नई दिल्ली। हाल ही में छपी एक नई रिपोर्ट से पता चला है कि पेट्रोलियम उद्योग में काम करने वाले मजदूरों और उसके आसपास रहने वाले लोगों पर अलग-अलग तरह के कैंसर होने का खतरा कहीं ज्यादा है। शोध के अनुसार पेट्रोलियम उद्योग के संपर्क में आने से मेसोथेलियोमा, त्वचा सम्बन्धी कैंसर, मल्टीपल मायलोमा, प्रोस्टेट और ब्लैडर कैंसर होने का खतरा कहीं ज्यादा है। वहीं इसके विपरीत घेघा, पेट, मलाशय और अग्न्याशय के कैंसर का खतरा कहीं कम होता है। गौरतलब है कि मेसोथेलियोमा एक दुर्लभ प्रकार का कैंसर होता है, जो शरीर के अनेक आंतरिक अंगों को ढंककर रखनेवाली सुरक्षात्मक परत, मेसोथेलियम, से उत्पन्न होता है। सामान्यतः यह बीमारी एस्बेस्टस के संपर्क में आने से होती है।

यह अध्ययन विश्व स्वास्थ्य संगठन की इंटरनेशनल एजेंसी फॉर रिसर्च ऑन कैंसर द्वारा किया गया है जोकि इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एनवायर्नमेंटल रिसर्च एंड पब्लिक हेल्थ में प्रकाशित हुआ है। इसे समझने के लिए एजेंसी के पर्यावरण और जीवनशैली से जुड़ी बीमारियों का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों ने 5। शोधों का विश्लेषण किया है। यह निष्कर्ष एक बार फिर यह साबित करते हैं कि पेट्रोलियम निष्कर्षण और शोधन से जो वायु प्रदूषण हो रहा है वो स्वास्थ्य के लिए बड़ा खतरा है। शोध में सामने आया है कि समुद्रों में लगे पेट्रोलियम प्लांट में काम करने वाले मजदूरों पर फेफड़ों के कैंसर और ल्यूकेमिया का खतरा ज्यादा था। वहीं दूसरी ओर जो लोग पेट्रोलियम प्लांट के आसपास रहते हैं उनमें बचपन के दौरान ल्यूकेमिया का खतरा कहीं ज्यादा था। शोधकर्ताओं के अनुसार पेट्रोलियम और उससे बने अन्य पदार्थों जैसे बेंजीन के संपर्क में आने से स्वास्थ्य सम्बन्धी जोखिम कैसे बढ़ जाता है, इसपर अभी और ज्यादा शोध करने की जरुरत है। जिससे यह पता लगाया जा सके कि यह कैंसर के खतरे को कैसे बढ़ा देते हैं। विशेष रूप से उन स्थानों पर जहां बड़ी मात्रा में पेट्रोलियम उत्पादन को लेकर काम हो रहा है और जिनपर बहुत ही कम शोध किया गया है। उन स्थानों पर इनके संपर्क में आने का खतरा भी कहीं ज्यादा है। वैज्ञानिकों का तर्क है कि इसके लिए एक अंतरराष्ट्रीय कॉन्सोर्टियम उन अध्ययनों का मार्गदर्शन करें जिससे अफ्रीका, मध्य पूर्व और एशिया इसके जोखिमों का मूल्यांकन किया जा सके। इंटरनेशनल लेबर आर्गेनाईजेशन द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार व्यावसायिक दुर्घटनाओं या काम से संबंधित बीमारियों के चलते हर साल 2।.8 लाख लोगों की मौत हो जाती है। वहीं 3।.4 करोड़ लोगों को काम के समय होने वाली दुर्घटनाओं में चोट पहुंचती है। वहीं इनके चलते हर साल दुनिया के कुल जीडीपी के करीब 3.94 फीसदी का आर्थिक नुकसान होता है। इनमें से करीब 65 फीसदी कार्य-संबंधी चोटें और मौतें अकेले एशिया में होती हैं। आंकड़ों के अनुसार हर रोज होने वाली इन ।,500 मौतों में से 6,500 कार्यस्थल के कारण होने वाली बीमारियों और 1,000 मौतें दुर्घटना और चोटों के कारण होती हैं। इनमें से 26 फीसदी के लिए कैंसर, 1। फीसदी के लिए सांस सम्बन्धी बीमारियां और 31 फीसदी के लिए संचारी रोग जिम्मेवार हैं।

सहमति के बाद उपलब्ध कराई दो लाख मूल्य की स्वास्थ्य किट

औबेदुल्लागंज। कोविड19 को देखते हुए क्षेत्रीय विधायक की पहल पर नगर के समाजसेवियों एवं व्यापारी महासंघ के प्रमुख पदाधिकारियों की एक आपातकालीन बैठक का आयोजन नगर के थाना परिसर में किया गया। इसमें तय किया कि वर्तमान में कोविड महामारी को देखते हुए एक 10 बेड का कोविड सेंटर अतिरिक्त बनाया जाना चाहिए, जिसको लेकर एसडीएम अनिल जैन, बीएमओ डॉ. अरविंद चौहान ने अपनी ओर से सहमति दे दी, लेकिन इसमें समाजसेवियों व व्यापारियों से आग्रह किया कि वे 10 बेड के अतिरिक्त कोविड सेंटर में सहयोग करे, जिससे लोगों को सुविधाएँ मिल सके। उनके इतने कहते ही कुछ ही देर में उपस्थित व्यापायिों ने दो लाख से अधिक मूल्य की स्वास्थ्य किट जन सहयोग से देने का आश्वासन दिया। इस दौरान ऑक्सीजन फ्लो मीटर तुरंत एसडीएम एवं बीएमओ को भेंट किए। इसके अतिरिक्त जो भी स्वास्थ सामग्री की आवश्यकता होगी वह भी नगर के व्यापारी महासंघ द्वारा प्रशासन को सहयोग करने की बात कही गई है। मिंट अरोरा ने अपने पास रखे ऑक्सीजन गैस सिलेंडर भी अस्पताल को उपलब्ध कराया।

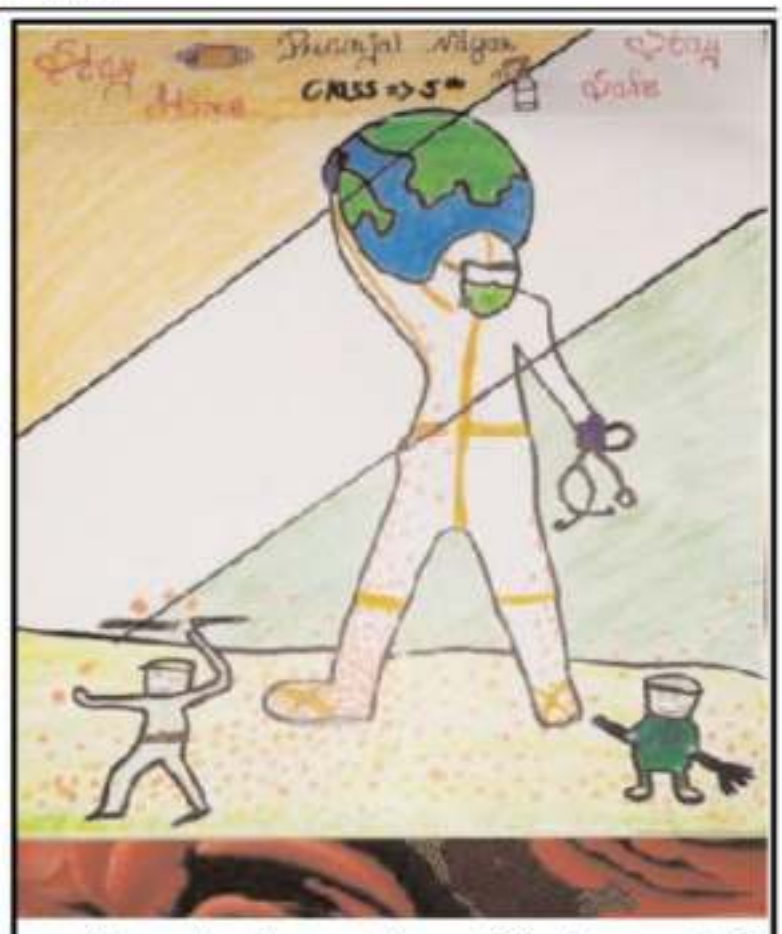

औबेदुल्लागंज में स्कूल ऑफ एक्सीलेंस के कक्षा पांचवी के छात्र प्रांजल नागर द्वारा बनाया गया चित्र महामारी के दौर में चिकित्सकों के संघर्ष को बयां करता है।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक सोनल मेहता केलिए प्रतीक्षा ग्राफिक्स, 127 देवी अहिल्या मार्ग, इंदौर (म.प्र.) से मुद्रित एवं 209-बी शहनाई रेसीडेंसी-2 कनाड़िया रोड इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: डॉ. सोनल मेहता फोन : 0731-2595008 Mail.sonal12mehta@yahoo.co.in 9755040008